NEXT IAS

दैनिक संपादकीय विश्लेषण

विषय

भारत में न्यायिक महाभियोग: कठोर विधिक प्रावधानों के बीच विद्यमान शिथिलता

भारत में न्यायिक महाभियोग: कठोर विधिक प्रावधानों के बीच विद्यमान शिथिलता

संदर्भ

- मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति जी.आर. स्वामीनाथन को पदच्युत हेतु *इंडिया* गठबंधन के सांसदों द्वारा लोकसभा अध्यक्ष को प्रस्तुत प्रस्ताव ने भारतीय संविधान के अंतर्गत न्यायाधीशों को पदच्युत की प्रक्रिया और उसमें निहित सुरक्षा उपायों पर सार्वजनिक परिचर्चा को पुनः जीवित कर दिया है।

न्यायाधीशों को पदच्युत का संवैधानिक आधार

- **संविधान के अनुच्छेद 124 और 217:** भारत में न्यायाधीशों को पदच्युत की प्रक्रिया निम्नलिखित प्रावधानों द्वारा संचालित होती है:
  - अनुच्छेद 124(4) एवं (5): सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए।
  - अनुच्छेद 217(1)(b) एवं 218: उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए।
- संविधान न्यायाधीशों के मामले में 'पदच्युत' शब्द का प्रयोग करता है, यद्यपि सामान्यतः इसे 'महाभियोग' कहा जाता है।
  - 'महाभियोग' शब्द केवल भारत के राष्ट्रपति (अनुच्छेद 61) के लिए प्रयुक्त होता है।
- **पदच्युत के आधार :** न्यायाधीश को केवल सिद्ध दुराचार या अक्षमता के आधार पर हटाया जा सकता है।
  - यद्यपि 'दुराचार' शब्द संविधान में परिभाषित नहीं है, किंतु न्यायिक व्याख्या ने इसके अर्थ को स्पष्ट किया है।

दुराचार की न्यायिक व्याख्या

- *के. वीरास्वामी बनाम भारत संघ (1991)* में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि ईमानदारी और निष्पक्षता न्यायाधीशों के लिए पूर्ण मानक हैं।
  - *एम. कृष्ण स्वामी बनाम भारत संघ (1992)* में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि प्रत्येक निर्णय त्रुटि या लापरवाही दुराचार नहीं है; इसमें जानबूझकर किया गया कदाचार, भ्रष्टाचार या नैतिक पतन शामिल होना चाहिए।

विधायी ढाँचा: न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968

- संसद ने अनुच्छेद 124(5) के अंतर्गत न्यायाधीशों के विरुद्ध आरोपों की जाँच की प्रक्रिया निर्धारित करने हेतु *न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968* और संबंधित नियम बनाए।
- **मुख्य प्रावधान :**
  - पदच्युत का प्रस्ताव कम से कम 100 लोकसभा सांसदों या 50 राज्यसभा सांसदों द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए।
  - प्रस्ताव लोकसभा अध्यक्ष या राज्यसभा के सभापति को प्रस्तुत किया जाता है।
  - अध्यक्ष/सभापति प्रस्ताव को स्वीकार या अस्वीकार करने का निर्णय लेते हैं।
- यदि प्रस्ताव स्वीकार किया जाता है, तो एक तीन-सदस्यीय जांच समिति गठित की जाती है, जिसमें एक सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश, एक उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश और एक विशिष्ट विधिवेत्ता शामिल होते हैं।
- यदि समिति न्यायाधीश को दुराचार या अक्षमता का दोषी पाती है, तो संसद के दोनों सदनों को दो-तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित करना होता है, जिसके बाद राष्ट्रपति पदच्युत का आदेश जारी करते हैं।

महाभियोग प्रक्रिया में संरचनात्मक दोष

- **अध्यक्ष/सभापति की भूमिका:** पदच्युत की प्रक्रिया अध्यक्ष या सभापति के विवेकाधिकार पर निर्भर करती है कि वे प्रस्ताव को स्वीकार करें या अस्वीकार।
  - प्रणाली की कमजोरी इस तथ्य में है कि एकमात्र पीठासीन अधिकारी जांच प्रारंभ होने से पहले ही प्रक्रिया को समाप्त कर सकता है।
  - यहाँ तक कि जब 100 या अधिक सांसद प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करते हैं, तब भी इसे प्रारंभिक स्तर पर खारिज किया जा सकता है, जिससे संसद की भूमिका अप्रासंगिक हो जाती है।
  - यह न्यायिक जवाबदेही के सिद्धांत को कमजोर करता है और कार्यपालिका को अनुचित शक्ति प्रदान करता है, जो अप्रत्यक्ष रूप से अध्यक्ष या सभापति के निर्णय को प्रभावित कर सकती है।
- **परिभाषित मानदंडों का अभाव:** *न्यायाधीश (जांच) अधिनियम* प्रस्ताव की स्वीकार्यता की शर्तें निर्दिष्ट नहीं करता।
  - परिणामस्वरूप, अस्वीकृति का निर्णय बिना कारण बताए किया जा सकता है, जिससे 100 से अधिक सांसदों द्वारा समर्थित संवैधानिक प्रयास निष्फल हो सकता है।
  - यह मनमानी और कार्यपालिका के प्रभाव की आशंका उत्पन्न करता है, विशेषकर जब अध्यक्ष या सभापति सदन के पीठासीन अधिकारी के बजाय एक वैधानिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करते हैं।
- **संवैधानिक अस्पष्टता:** अनुच्छेद 124(5) अध्यक्ष/सभापति को प्रस्ताव अस्वीकार करने का अधिकार नहीं देता।
  - यह केवल संसद को दुराचार की जांच और प्रमाण की प्रक्रिया विनियमित करने का अधिकार देता है।
  - प्रमाण न्यायिक जांच से आना चाहिए, न कि अध्यक्ष की प्रारंभिक समीक्षा से।

सुधार की आवश्यकता

- **अध्यक्ष की भूमिका पर पुनर्विचार:** संवैधानिक संतुलन और नियंत्रण की भावना को देखते हुए, अध्यक्ष/सभापति की भूमिका को केवल प्रक्रियात्मक सत्यापन तक सीमित करना आवश्यक है, न कि आरोपों के सारगर्भित मूल्यांकन तक।
  - वास्तविक मूल्यांकन स्वतंत्र जांच समिति द्वारा किया जाना चाहिए।
- **पारदर्शिता सुनिश्चित करना:** किसी प्रस्ताव को अस्वीकार करने का निर्णय लिखित कारणों के साथ होना चाहिए और मनमानी से बचने हेतु न्यायिक समीक्षा के अधीन होना चाहिए।
- **विधायी सुधार:** *न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968* का पुनः परीक्षण आवश्यक है ताकि:
  - प्रस्तावों की स्वीकार्यता के स्पष्ट मानदंड परिभाषित किए जा सकें।
  - जब कोई प्रस्ताव संवैधानिक आवश्यकताओं को पूरा करता है, तो स्वतः जांच समिति को संदर्भित किया जाए।
  - प्रक्रिया को राजनीतिक हस्तक्षेप से सुरक्षित रखते हुए न्यायिक स्वतंत्रता को संरक्षित किया जा सके।

निष्कर्ष

- महाभियोग प्रस्ताव ने न्यायिक स्वतंत्रता और जवाबदेही के बीच संतुलन पर महत्वपूर्ण चर्चाओं को पुनः जीवित किया है।
- भारतीय संविधान ने दुरुपयोग रोकने हेतु पदच्युत की प्रक्रिया निर्धारित की है। किंतु अध्यक्ष/सभापति को प्रदत्त विवेकाधिकार इस प्रक्रिया को मात्र राजनीतिक औपचारिकता बना देने का खतरा उत्पन्न करता है।

- कानून को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जनप्रतिनिधियों द्वारा प्रस्तुत गंभीर प्रस्तावों को उचित विचार के बिना खारिज न किया जाए, ताकि न्यायपालिका में जनता का विश्वास बना रहे।
    - *न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968* का पुनरीक्षण केवल प्रक्रियात्मक आवश्यकता नहीं है, बल्कि पारदर्शी और जवाबदेह न्यायपालिका हेतु संवैधानिक अनिवार्यता है।

Source: TH

दैनिक मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: 'भारत में न्यायाधीशों को पदच्युत की संवैधानिक एवं प्रक्रियात्मक रूपरेखा का परीक्षण कीजिए। क्या महाभियोग प्रस्ताव को स्वीकार या अस्वीकार करने का विवेकाधिकार, जो अध्यक्ष अथवा सभापति को प्रदान किया गया है, न्यायिक जवाबदेही और संसदीय लोकतंत्र के सिद्धांतों को कमजोर करता है?

■■■■